भा" ठ-अध्याय

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी-पंजाबी उपन्यासों में वर्णित नारी-पात्रों के विभिन्न मानसिक संघ"ाॅ, प्रेरणाओं एवं उनकी प्रतिक्रियाओं का मनोवैज्ञानिक विश्ले"ाण

6-1&फ्रायड के मनोविश्लेषण सिद्धान्त के आधार पर :

''हमारे जीवन में भावों और मनोवेगों का विशेष स्थान है। सुख और दुःख को हम भाव कहते हैं एवं भय, क्रोध, घृणा, विस्मय आदि मनोवेग हैं। मनोवेग सुखात्मक भी होते हैं, दुखात्मक भी। इन भावों और मनोवेगों का अध्ययन मनोविज्ञान का विषय है। प्राचीन काल में मनोविज्ञान का विशेष शास्त्र न था तथापि हमारे प्राचीन दर्शनों तथा साहित्य–शास्त्र में मनोविज्ञान सम्बन्धी प्रचुर सामग्री मिलती है।''[1] विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि ''मनोवेग मन की वह भावपरक उद्वेलित अवस्था है जो किसी बाह्य या अन्तः उत्तेजना के ज्ञान से प्रवृत्यात्मक या निवृत्यात्मक क्रियाओं को जन्म देती है।''[2]

मानव जीवन भावों अथवा मनोविकारों से परिचालित होता है। मानव विचारों और भावों का घनिष्ठ सम्बन्ध है। फ्रायड ने मानसिक चेतना को तीन भागों में विभक्त किया है–चेतन, उपचेतन तथा अवचेतन। चेतन मन मनुष्य की जाग्रतावस्था से सम्बन्धित है। मानव का तात्कालिक बोध एवं व्यवहार इसी की क्रिया के फलस्वरूप है। इसके अतिरिक्त जो मानसिक है उसे फ्रायड ने अचेतन माना है। फ्रायड ने अचेतन के दो भाग किए हैं–उपचेतन एवं अचेतन। फ्रायड उपचेतन मन को स्मृति भी कहते हैं। उनके अनुसार ''अचेतन अनुभव चेतन होने की क्षमता रखता है। जब अचेतन मन की कोई बात अथवा इच्छा अभिव्यक्ति के लिए प्रत्यन्तशील होती है, तो

वह उपचेतन में आकर रुकती है और वहाँ से उसे सरलतापूर्वक स्मरण करके चेतन में लाया जा सकता है।''[3] चेतन मन का छोटा सा भाग है। अचेतन मन का अधिकांश हिस्सा है। फ्रायड ने अचेतन मन को, ''सक्रिय मानसिक प्रतिक्रियाओं का आगार अर्थात् गत्यात्मक, असंस्कृत मूल–प्रवृत्तियों से परिपूर्ण, शिशु–सुलभ भोला–भाला, कामुकतापूर्ण, अतार्किक एवं अनैतिक, बाह्य वास्तविकता से पृथक एवं अपनी क्रियाओं में आनन्द–सिद्धान्त से संचालित होने वाला कहा है। इसमें परस्पर–विरोधी इच्छाएं भावनाएं साथ–साथ रहती हैं और वे परस्पर विनिमयशील भी हो सकती हैं।''[4]

फ्रायड ने मन का एक और विभाजन भी किया इदं, अहं एवं पराहं। इदं व्यक्ति की मूल–प्रवृत्तियों (लिबिडो) का संग्रहालय है। अहं, फ्रायड के अनुसार, ''इदं का वह अंश है जो बाह्य पर्यावरण से प्रभावित होकर विकसित होता है।''[5] पराहं अहम् का विकसित एवं परिष्कृत रूप है। ''प्राथमिक रूप से इसका लक्ष्य उन प्रवृत्तियों को नियन्त्रित तथा संचालित करना होता है.....पराहम् नियमहीनता और अराजकता पर आन्तरिक नियंत्रण रखकर व्यक्ति को समाज का विधि–पालक सदस्य बनने में योग देता है।''[6] ''चेतन–अचेतन तथा इदं–अहं एवं पराहं परस्पर विरोधी इच्छाओं एवं प्रेरकों के केन्द्र हैं, जिनमें एक–दूसरे का विरोध होना स्वाभाविक है...मन के अन्दर अनसुलझे तनाव की स्थिति उत्पन्न होती है। फ्रायड ने इस स्थिति को 'कुंठा' कहा है।''[7] इन कुंठाओं के कारण मानव में क्रोध, आक्रमण एवं अन्य ध्वंसात्मक प्रवृत्तियाँ उत्तेजित होती हैं। इनसे बचने के लिए मानव अनेक प्रतिक्रियाओं को अपनाता है। जिन्हें सुरक्षात्मक गतियाँ कहा जाता है। ये प्रतिक्रियाएं हैं। (1) दमन,

(2) विस्थापन, (3) प्रतीकीकरण, (4) दिवास्वप्न, (5) प्रतिक्रिया–निर्माण, (6) प्रक्षेपण, (7) अन्तःक्षेपण, (8) तादात्म्यीकरण, (9) औचित्य स्थापन, (10) क्षतिपूर्ति, (11)पलायन, (12) प्रतिगमन तथा उन्नयन अथवा उदात्तीकरण। फ्रायड के मनोविश्लेषण सिद्धान्त के आधार पर हिन्दी उपन्यास लेखिकाओं ने नारी–पात्रों के विभिन्न संघर्षो एवं प्रतिक्रियाओं का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है।

'डार से बिछुडी' की पाशो के संवेगों का 'कृष्णा सोबती' ने अत्यधिक मार्मिक चित्रण किया है। पाशो की माँ खत्री परिवार की आत्मजा है। वह शाह परिवार में प्रेम–विवाह करती है। उस पर गाँव वाले छींटा–कशी करते हैं ''सच पूछो शेख जी पूरा सराफाँ भाइयों भाइयों पर हँसता है। बड़ा कल धर्म काँटें के आगे से निकला तो सावन शाह की टोली ने बोली मारी–बादशाहों अब क्या शेख क्या बाम्हन। खत्रियों की बेटियाँ तो अब काबुल कन्धार पहुँचेगी।''**8** माँ की स्वच्छंदता के दुष्परिणाम का भुगतान पाशो को करना पड़ता है। पाशो को ननिहाल में कठोरानुशासन का त्रास झेलना पड़ता है। पाशो के अचेतन की विद्रोही–प्रवृत्तियाँ आक्रमक हो उठती हैं। वह इस परिवेश से मुक्त होने के लिए छटपटाती है। वह घर से पलायन कर दीवान लखपतराय की परिणीता बनती है। पति की मृत्यु–पश्चात, उसके वैधव्य–कालीन जीवन की मार्मिकता का लेखिका ने अत्यन्त स्वाभाविक अंकन किया है। एक विधवा नारी के हृदय में उमड़ते–घुमड़ते लिबिडो के निःशब्द हाहाकार का जैसा मनोवैज्ञानिक विश्लेषण लेखिका ने किया है। वैसा अन्यंत्र मिलना दुर्लभ है।

'वीरान रास्ते और झरना' की अचला चाचा की अवैध–संतान है। वह इस वास्तविकता से परिचित है। उसका व्यक्तित्व कुंठित और अवसादग्रस्त हो जाता है। वह इस कुंठित जीवन से त्रस्त हो अवनति–मार्ग अपनाती है। वह शराब पीती है।

शराब की मदहोशी उसे इस कुंठा से क्षणिक निवृत्ति देती है। वह परपुरुषों का संसर्ग कर उन्हें पीड़ित कराती है। परपीड़ारति उसके कुंठित जीवन में मरहम का कार्य करती है। वह शैलेन्द्र के सानिध्य से शीतल झरने जैसी ठंडक अनुभव करती है। अचला के वीरान रास्ते जैसे जीवन में, शैलेन्द्र झरने जैसी शीतलता प्रदान कर, उसे सम्पूर्ण कुंठाओं से मुक्त करवाता है।

'एक तिकोना दायरा' की एवलिन कामुक–प्रवृत्ति (लिबिडो) की नायिका है। वह पति जर्ज कर्ट द्रस्ट की उदारता का अनुचित लाभ–भोग करती है। वह जर्मन फ्रैंक से मित्रता करती है। वह अपने मित्र फ्रैंक से समागम हेतु विदेश में जाती है। उसका अचेतन मन उसे ऐसा करने के लिए प्रतिबंधित करता है, ''एक व्यक्ति के बारे में सोचकर दूसरे व्यक्ति को समर्पण करना घातक पापों में से एक है और निर्मम यातना उसका दंड है।''[9] एवलिन के मन में पाप–पुण्य के अन्तर्द्वन्द्व का घमासान छिड़ गया। ''सामाजिक जीवन में द्वन्द्व सदैव संघर्ष, विरोध, युद्ध आदि में प्रकट होता है। उसी प्रकार हृदय क्षेत्र में भी दो विरोधमयी प्रवृत्तियों के कारण द्वन्द्व चलता है। सत–असत्, पाप–पुण्य, न्याय–अन्याय, राग–विराग इत्यादि से युक्त होकर जब दो भाव एक साथ उत्पन्न होते हैं तब मनुष्य विचार के आधार पर नहीं निर्णय कर पाता कि किस पक्ष को स्वीकार करे अथवा किसका त्याग करें। ऐसी स्थिति में उसके भीतर 'हाँ–नहीं' में खींच–तान चलती है। यही अन्तर्द्वन्द्व कहलाता है।''[10] एवलिन भी इसी अन्तर्द्वन्द्व की ऊहापोह में है कि अचानक विमान दुर्घटनाग्रस्त हो जाता है और एवलिन की मृत्यु हो जाती है।

'ये छोटे महायुद्ध' में लोपा पाश्चात्य–सभ्यता के प्रति आस्तिक नारी है। ''मनुष्य का चरित्र मन की क्रियाओं के द्वारा निर्मित होता है। अतः चरित्र–विकास के अध्ययन में मनोविज्ञान का बहुत महत्व है। फ्रायड के अनुसार किसी कृति का नायक लेखक के (ईगो) अहं के अतिरिक्त कुछ नहीं है।.....ऐसे चरित्र आदर्श और यथार्थ दोनों के आधार पर निर्मित किए जाते हैं। ऐसे चरित्र अधिकांशतः राजनीतिक एवं मनोवैज्ञानिक चित्रण करने में प्राचीन तथा पाश्चात्य मनोविज्ञान सहायक सिद्ध हुए हैं।''[11] लोपा भी बाह्यचरण से तो पश्चिमी सभ्यता से आकर्षित है किन्तु उसके अचेतन मन के किसी न किसी कोने में भारतीय आदर्शों के प्रति मोह अवश्य है। वह अपनी माँ गार्गी की आस्था की कायल भी है। वह अपनी माँ की रुग्णावस्था की सूचना पाते ही, माँ को आश्रम से लेने के लिए जाती है। वह माँ की सेवा कर भारतीय आदर्शों के प्रति समर्पित दिखाई देती है।

'दहकन के पार' की तुषार स्वयं को धार्मिकता की किसी श्रृंखला में आबद्ध होने के प्रतिकूल है। वह हिन्दू नारी होकर भी, मुस्लिम असलम के अनुराग में अनुरक्त है। उसका प्रणय पवित्र और आदर्श है। ''नारी के इस अनन्य प्रेम की पवित्रता और अलौकिकता को हिन्दी उपन्यासकार भी सहज ही श्रद्धा अर्पित करता है। वह मानता है कि नारी अपने जीवन में केवल एक ही पुरुष को प्रेम कर सकती है, एक ही के चरणों में श्रद्धा अर्पित कर सकती है। यदि ऐसी नारी का विवाह उसके प्रेमी के स्थान पर, किसी अन्य पुरुष के साथ किया जाता है तो वह उसके साथ घोर अन्याय है और ऐसा विवाह व्यभिचार की श्रेणी में आ जाता है।''[12] तुषार का प्रणय भी अनन्य है। वह भी सारी रुढ़ियों के प्रतिबन्ध–खंडित कर, असलम के प्रति समर्पित है। रुढ़ियों के प्रतिरोध में तुषार को विविध संघर्षों से जुझना पड़ता है। उसकी वैचारिक यौद्धिकता दर्शनीय है।

'उम्र एक गलियारे की' नायिका सुनन्दा विवाहपूर्वाकर्षण–ग्रन्थि की शिकार है। सुनन्दा का परिणय नवल मोहन से होता है। पति की उपेक्षा से उसकी लिबिडो–ग्रन्थि अत्यधिक उत्तेजित हो जाती है। वह कुंठित होकर पिता के गृह–शरण लेती है। वह स्वप्न लोक में भी विचरती है। उसका आपूरित प्रणय अन्तर्द्वन्द्व से आलोकित होता है। ''मनोवैज्ञानिक पद्धति में मानस्तत्व के माध्यम से मानव चरित्र का चित्रण एवं विश्लेषण होता है। क्योंकि मनुष्य मानसिक गतिविधियों के कारण ही अपने जीवन की सार्थकता पाते हैं। इस पद्धति का ध्येय मनुष्य की बाह्य–प्रक्रिया से उसके अन्तर को समझना और समझाना होता है। आन्तरिक जगत का चित्रण करने वाले कलाकार को अपनी कथावस्तु में उसी तरह छिपा रहना चाहिए जिस तरह ईश्वर नारी सृष्टि का सृष्टा होते हुए भी उसके पीछे छिपा रहता है।''[13] सुनन्दा के मानसिक संघर्ष को उद्‌घाटित करने में लेखिका भी बड़ी सजग और सहज है। अन्ततोगत्वा कुंठित और संत्रासित सुनंदा को उसका प्रियतम मुक्ति दिलाता है।

'विषकन्या' की कामिनी रूप–रागात्मकता में प्रवीण है। राग में दो तत्व निहित होते हैं। एक तत्व सृजनात्मक है तो दूसरा तत्व विघटनकारी है। संतुष्ट राग सृजन–शक्ति है और असंतुष्ट राग संहार–शक्ति है। कामिनी के रूप और राग में संहारक–तत्व अधिक क्रियाशील है। विरोधी–परिस्थितियों के कारण कामिनी का भोगवादी स्वरूप कुंठित होने के कारण, एक विस्फोटक की तरह फटने को व्यग्र है। सौंदर्य की उपयोगिता लिबिडो (काम) में निहित है। मनोवैज्ञानिक रस–लब्धि को ही सौंदर्य मानते हैं। कामिनी में वासनातिरेक है और दैहिक समर्पण के प्रति आकुलता की अधिकता है। इसीलिए वह अपनी बहन के पति को भी छलपूर्वक छलती है ''क्षमा कीजिएगा, इसी भाषा में मैं अपनी बात ठीक से कह पाऊँगी। जैसा नाटक

का परिवेश, रंगमंच, पात्र वैसा ही ध्वनि–संगीत भी हो तब ही नाटक जमता है।..... .....''[14] कामिनी का सौंदर्य आहत हो चुका है इसलिए उसमें संहारक, हिंसक प्रवृत्ति उग्र रूप धारण कर चुकी है। वह किसी भी पुरुष के आलिंगन–पाश में आबद्ध होने से पूर्व ही उसका संहार करना अनिवार्य मानती है। कामिनी के व्यक्तित्व में कुंठावश ईर्ष्या और प्रतिशोध की भावना अधिक सबल हो गई है। इसीलिए वह पुरुष वर्ग से प्रतिशोध लेती है।

'कर्क रेखा' की नायिका तन्वी लिबिडो–ग्रन्थि से पीड़ित है। विवाह पूर्व महिम का प्रणय उसे संत्रासित करता है। वह निश्छल और मनोवांछित समागम के लिए विकल और व्यथित है। तन्वी का परिणय उसकी कामना–शक्ति के विपरीत अनिन्द्य से होता है। पति की शुष्कता और मनोकामना का अपूर्ण होना, दोनों ही परिस्थितियाँ तन्वी पर हावी होकर, उसे लैंगिक–तुष्टि के लिए पड़ोसी ध्रुव के प्रति आकर्षित करती है। ध्रुव में उच्छवासयुक्त पुलकन की झलक से कामिनी का हृदय आह्लाद से भर जाता है। वह ध्रुव से वार्तालाप कर स्नेहिल हो उठती है। कामिनी के व्यक्तित्व की जटिलता का निवारण उसके पति के अनुराग से होता है।

'कृष्णवेणी' की नायिका कृष्णवेणी रूपवान अद्‌भुत प्रतिभा की धनी है। उसमें दिव्य–शक्ति की तीक्ष्णता भी है। शान्ति–निकेतन में भी, उसकी अद्‌भुत प्रतिभा की ख्याति थी। वह एक आदर्श और अनन्य प्रेमिका है। कृष्णवेणी भास्करन के प्रेम से अनुरक्त है। प्रेम एक जीवित शब्द है, जिसके सुनते ही व्यक्ति की धड़कन में, एक और ही धड़कन सुनाई पड़ती है। प्रेम के आदान–प्रदान से, अनेकों अनुभव प्राप्त होते हैं। प्रेम एक ऐसी भावना है जो घृणा, क्रोध, स्वार्थ आदि से परे है। प्रेम एक अलौकिक अनुभूति है। कृष्णवेणी का प्रेम निस्वार्थ और अमर है। वह भास्करन की

वंशी–वादन सुन, प्रेम में सराबोर हो उठी। वह भास्करन को पोट्रेट बनाने के लिए कहती है, ''क्यों भास्करन मेरा पोट्रेट बना सकते हो? आज तक मेरा पोट्रेट कोई नहीं बना पाया। कहा जाता है, मेरी यह तीखी नाक, किसी भी कलाकार की तूलिका की पकड़ में नहीं आ सकती, केवल कैमरे का लैंस ही इसे अब तक बन्दी बना सका है।''**15**

कृष्णवेणी का प्रेमी भास्करन कुष्ठरोग से ग्रस्त हो पलायन कर जाता है। सच्ची प्रेयसी भला कैसे पराजित होती। उसने एकाग्रचित चक्षु–मूँद कर देखा, ''एक अंधेरी बैरक में भास्करन बैठा है।.....होंठविहीन उसका वह चेहरा वीभत्स बन गया है, जैसे कटहल का छिलका। नाक नहीं है, पलकहीन अंगारे–सी दो आँखें ही बस दप–दपकर जल रही हैं पूरे चेहरे में.....।''**16** कृष्णवेणी अपने प्रियतम के कुष्ठ रोगग्रस्त होने पर भी उसका परित्याग नहीं करती । वह भास्करन की सेवा के लिए अपने माता–पिता को, स्वयं के मृतक होने की मिथ्या–सूचना भेजती है। वह आजीवन भास्करन की सेवा कर स्वयं को धन्य समझती है।

'सागर पार का संसार' में लेखिका ने विदेश के विभिन्न स्थलों का अवलोकन किया। उनके साथ उनका पुत्र नीलाभ, अमिता एवं पोती युग्मी भी थे। शशि प्रभा शास्त्री 'जोशुआ ट्री' और 'मोहावे डेजर्ट' के असीम–सौंदर्य दर्शन के द्वारा उद्‌बुद्ध होने वाली, विस्मय–भावना से अभिभूत हो उठी। वह सुवासिनी सौंदर्य की असीमता, सूक्ष्मता एवं सलज्ज तरलता–पूर्ण लुका छिपी से विस्मित होकर, जिज्ञासावश प्रश्न करती है कि अपने गृह की सम्पूर्ण सुख–सुविधाओं को तिलांजलि दे, व्यक्ति किस लिए भटकता है? इस प्रश्न के उत्तर में वह स्वयं कहती है कि युगों युगान्तरों से

रहस्य की खोज ही उसे भटकाती है, क्योंकि यह रहस्य ही उसे आनन्द–वर्षा से विभोर करता है और आनन्द ही रहस्य है। फ्रायड ने भी कहा है कि मन में विविध प्रकार के अन्तर्द्वन्द्व उत्पन्न होते हैं। आनन्द की प्राप्ति के पश्चात, वह शमित हो जाते हैं अथवा संतुष्ट हो जाते हैं।

'मित्रो मर जानी' की मित्रो (सुमित्रावन्ती) सरदारी लाल की ऐसी पत्नी है। जिसमें विश्वास एवं विचार–सामंजस्य का अभाव है। मित्रो में कामुकता की अधिकता है। उसके व्यक्तित्व–निर्माण में, उसके बचपन के उन्मादक वातावरण का प्रभाव है। वह ससुराल में 'उन्मुक्त–वातावरण' को प्रतिबन्धित पाकर, आत्म–प्रदर्शन, सोलह–श्रृंगार में लिबिडो की तुष्टि पाती है। मित्रो को विरासत में मिली कामुकता, विकृत शब्दों का प्रयोग भी अपेक्षित समझती है। वह पर पुरुषों के साथ समागम और रति–क्रीडा में लिबिडो–ग्रन्थि को संतुष्ट करती है। वह पति को रसिकता में उलझाना चाहती है। ''भोले बलमा बिटर–बिटर क्या ताकते हो, अपनी मित्रो को ही नहीं पहचाना....ढोल जानी। इस चढ़ी नदिया में तो बड़े–बड़े तारन डूबते आए....मेरे मोहने रांका....फिर आँखे नचा फिरा पूछा.....गिरदौर जी, पिछली रात कहाँ–कहाँ के हुए दौर और कहाँ–कहाँ पड़े पडाव? मैं भी तो सुनूँ.....मेरे हरमन! मोला! यही किस्सा बीता तुम्हारी मित्रो के साथ।''[17] वह व्यभिचार में आस्था रखती है। इसके लिए वह पति द्वारा कई बार पीटी भी जा चुकी है। उसे मान–अपमान, लोक–लज्जा, घृणा इत्यादि से तनिक भी अन्तर नहीं पड़ता। मित्रो में काम–प्रवृत्ति की प्रबलता है। पति के शिथिल प्रेम–व्यापार से आहत, मित्रो आक्रामक प्रेम–पाने के लिए व्यभिचार करती है, तो यह उसके चरित्र की स्वाभाविक परिणति है। वह व्यभिचार के माध्यम से अपनी लिबिडो–ग्रन्थि को संतुष्ट करना चाहती है।

'चित्तकोबरा' की मनु पति की उपेक्षा से रिचर्ड हचिसन के अनुराग से अनुरंजित है। ''रिचर्ड से मिलने के बाद मुझे मेरी निजी दृष्टि वापस मिल गई थी..... मैं उसी को प्यार करती हूँ.....उसी को.....मैं उसी को प्यार करती हूँ.....उसी को.... यह क्या कम है? मैं उसे प्यार करती हूँ। हाँ हर पल मैं कहूँगी....रिचर्ड–रिचर्ड–रिचर्ड. .....एक पल में तीन बार और पल बीत जाएगा।''**18** वह रिचर्ड के समागम से प्रसन्नचित्त रहती है। वह रिचर्ड के साथ क्लब जाती है, डांस करती है। वह कुंठित यौन की तुष्टि पर प्रसन्न हो उठती है। वह रिचर्ड की अनुपस्थिति में उसी के स्वप्नों में खोई रहती है। उसका विरह–विदग्ध मन प्रतिगमन कर पुरा–स्मृति में निमग्न हो जाता है, ''एक बार.....दस साल पहले.....आंखों पर काली लकीर खींचने को हाथ बढ़ाया था, पर रिचर्ड ने आइब्रो पेंसिल मुझसे छीनकर खिड़की के बाहर फेंक दी थी।.....''**19** मनु प्रियतम के पत्र की प्रतीक्षा में उद्विग्न है। वह रिचर्ड के पत्र को दूर से ही पहचान लेती है। उसने पति के सम्मुख निर्भीकता से अपने प्रेम को स्वीकारोक्ति दी। वह अपने प्रियतम के विषय में पति से कोई दुराव–छिपाव नहीं रखती। वह अपने कुंठित लिबिडो को सहज ही स्वीकारती है, ''मैं उन लोगों में से हूँ जो क्षणों में जीते हैं। मुझे प्यार मिले और मिलता ही चला जाए–रोज–दर रोज, तो क्या मैं उससे ऊब न जाऊंगी?''**20** मनु का यह प्रसंग अगर आसामान्य यौन सम्बन्ध का है तो इसके पीछे एक गहरा निष्ठापूर्ण आत्मवेग भी है। इन समस्त जीवन–रोधी परिस्थितियों से घिरी हुई मनु अगर रिचर्ड के व्यक्तित्व में बैठकर शीतलता प्राप्त करना चाहती है, तो इसे अवैध कहना समीचीन नहीं है। मनु अपनी कुंठा को विलय करने का एक मूक प्रयास करती है।

'परछाइयों के पीछे' की सुमित्रा पति प्रेम वंचिता और परित्यक्ता नारी है। वह अपनी कुंठाओं का उदात्तीकरण करती है। गर्भिणी सुमित्रा ''दर–दर की ठोंकरे खाती फिरती थी। उस की रक्षा के लिए सब कुछ सहा। कितना कुछ सुनकर, सहकर कितने जतन से पाला है उसने इस जान को।.....बगल में लेटे हुए अपने लाडले को, उसने हल्के से थपथपाया था। कितना भाग्यशाली है। मेरा मुन्ना.....''[21] सुमित्रा बिट्टू की बाल–सुलभ चेष्टाओं से विस्मित और आनन्दित हो उठती। ''बिट्टू लड़खड़ाता सा खड़ा होता और दहलीज लांघता हुआ ठुमक–ठुमक कर चलता तो वह उस पर बलिहार हो–हो जाती.....सब कुछ सुमित्रा के लिए मनोरंजन के साधन थे। औत्सुक्य और प्रसन्नता से वह उस सब को रससिक्त स्नेहिल दृष्टि से देखा करती।''[22] सुमित्रा के विकास की चरम सीमा केवल उसके मातृत्व में ही है। मातृत्व ही उसकी सर्वोच्च सफलता है। ''नारी केवल माता है और उसके उपरान्त वह जो कुछ है सब मातृत्व का उपक्रम मात्र है। मातृत्व संसार की सबसे बड़ी साधना, सबसे बड़ी तपस्या, सबसे बड़ा त्याग और सबसे महान विजय है। एक शब्द में उसे लय कहूँगा–जीवन का व्यक्तित्व का और नारीत्व का भी।''[23] सुमित्रा अपने मातृत्व–सुख के लिए सांसारिक विरोधों और जटिल समस्याओं को सहर्ष झेलती है। उसने अपने बिट्टू के लिए पति के अत्याचार सहे। वह न केवल पति के ही अपितु पारिवारिक, सामाजिक तथा आर्थिक कठिनाइयों के भी संघर्ष सहन करती है। उसका बिट्टू उसके जीवन की अमूल्य–निधि है। ''माँ शब्द का अर्थ है–दया, क्षमा और ममता। स्नेह और वात्सल्य का अन्तिम रूप है माँ।''[24]

'भैरवी' की राजेश्वरी वैधव्य कालीन संकटों को सिंहनी की भांति चीरती आगे बढ़ती है। उसने अपनी सम्पूर्ण अभिलाषाओं का दमन कर लिया। राजेश्वरी के प्राण अपनी इकलौती पुत्री चन्दन में ही बसते थे। ''वह सुन्दरी पुत्री को दिन–रात आँखों में मूँदकर रखती थी।.....कालेज जाती तो वह साथ रहती, लौटती तो वह पुत्री के कदम से कदम मिलाती चलती। जागरूक सिंहिका की ही भांति वह नित्य पुत्री का छायाग्रास निगलती रहती।''**25** राजेश्वरी चंदन के हाथ पीले करने के लिए बड़ी उत्सुक है। वह चंदन की परिणय–बेला में विह्वल हो उठी। ''हाय कितनी बेरुखी से पली–पलाई बेटी पराई हो जाती है! उसकी हिचकी यत्न से दबाए जाने पर भी शायद निकल ही पड़ती.....।''**26** राजेश्वरी ही नहीं हर माँ की ममता बेटी की विदाई–बेला पर विह्वल होती है। भैरवी की राजेश्वरी में माँ के शाश्वत रूप का चित्रण हुआ है।

फ्रायड के अनुसार ''जीवन बाह्य एवं आन्तरिक द्वन्द्वात्मक परिस्थितियों और उसके समाधान की परमपराओं से निर्मित है। जन्म से मृत्युपर्यन्त मानव की मौलिक एवं इदं गत प्रवृत्तियों को बाह्य एवं आन्तरिक अवरोधों का साक्षात्कार करना पड़ता है और समाज की रक्षा के लिए मनुष्य को अपनी प्रेम–भावना और आक्रमण–भावना दोनों में ही काँट–छाँट करना सीखना पड़ता है। इससे मनुष्य के व्यक्तित्व–गठन में सदैव परिवर्तन होता रहता है और उसे इस द्वन्द्व से उत्पन्न अवरोध एवं निराशा के साथ सामंजस्य करना होता है।''**27** पंजाबी–उपन्यास लेखिकाओं ने भी फ्रायड के मनोविश्लेषण सिद्धान्त के आधार पर नारी–पात्रों के विभिन्न मानसिक संघर्षों, प्रेरणाओं एवं उनकी प्रतिक्रियाओं का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है।

'यात्री' उपन्यास में कृपापात्र की माँ का अन्तर्द्वन्द्व और वात्सल्य का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण हुआ है। कृपापात्र को पाकर माँ की ममता धन्य हो उठी। उसकी सूनी गोद कृपापात्र की किलकारियाँ से महक उठी। कृपापात्र के सौंदर्य और सद्‌गुणों से माँ तो फूली नहीं समाती। वह सन्तानाभाव के अन्तर्द्वन्द्वों से मुक्त हो जाती है। उसे वात्सल्य के सुख का सागर आनन्द–विभोर कर देता है।

'जलावतन' की त्रीजा मलिक के अनुराग से अनुरंजित है। त्रीजा मलिक की प्रेम–पुजारिन है। वह मलिक के जन्मदिन पर, उसके माँगने पर, माँ की डायरी चुरा कर देती है। वह प्रेमी के विकल और हतप्रभ जीवन को स्नेह–सिंचित करके, उसमें पौरुष भर देती है। वह मलिक से कहती है कि मेरी मम्मी भी हमारा परिणय करना चाहती है, ''बीकॉज.....बीकॉज वी बोथ बीलोंग टु ममी।''**28** वह मलिक की परिणीता बन कर, पत्नीत्व के सनातन–कर्त्तव्यों के प्रति निष्ठावान बनी रहती है। त्रीजा का प्रेम–प्रसंग बड़ा ही सहज और मनोवैज्ञानिक है।

'धुप वाला शहर' की गीता डाक्टर की परिणीता है। उसकी आत्मजा सोनिया है। व्यावसायिक–व्यस्तता को गीता पति की उपेक्षा समझती है। वह जीवन को रिक्त समझती है। वह लैंगिक–पूर्ति की भावना से डॉन के प्रति आसक्त होती है। डॉन की जीवन्तता, स्पष्टवादिता तथा अपने प्रति एक अटूट आकर्षण देखकर, गीता डॉन को अपना मानस–धन स्वीकार कर लेती है। गीता का स्वाभाव–परिवर्तित होता है। वह डॉन से मिलने जब जाती, तब वह विशेष कपड़े पहनकर जाती ''.....उस दिन अचानक ओसनू खिआल आइआं कि उसनू कोई वधिआ कपड़ा पाणा चाहिदा सी..... उसने इक हल्दी रंग दी साड़ी पा लई, नाल इक चांदी दी चेन विच परोइआ होइंआ छण–छण करदा मोटा चांदी दा पैंडूलम।''**29** वह सुन्दर परिधान पहन डॉन को

प्रोत्साहित करती है। इस प्रक्रिया से उसकी मानसिक अतृप्ति को हठात् तृप्ति का स्वाद होता है। वह डॉन को एयर इंडिया छोड़ने जाती है। डॉन के चले जाने पर वह स्वयं को नितान्त अकेला पाती है, ''जिन्दगी ने मैंनू ऐनी इर्कल दिती ऐ.....चारे कन्नीआं समेट के .....जिवें .....आपणे आप दी गुफा विच वड के बहि गई आं। ना साह दी आवाज बाहर निकले.....नां बाहरों कोई आवाज ऐथे पहुँचे.....।''[30] वह डॉन की अनुपस्थिति में पुनः नीरस और एकान्त हो गई। डॉन के विरह–क्षणों में गीता के व्यक्तित्व का स्वाभाविक विकास अवरुद्ध हो गया। गीता अपने व्यक्तित्व का स्वाभाविक भोग नहीं कर पाती। वह लेखिका द्वारा निर्देशित–पथ पर अग्रसर होती है।

6-2 एडलर एवं युंग के व्यक्ति मनोविज्ञान एवं विश्लेषणात्मक मनोविज्ञान के आधार पर :

एलफ्रेड एडलर के अनुसार, ''प्रत्येक व्यक्ति में जन्मजात विशिष्ट रचना–शक्ति होती है जो आनुवंशिकता एवं उसके पर्यावरण के साथ मिलकर उसके विशिष्ट व्यक्तित्व का निर्माण करती है। इस गतिशील रचनात्मक शक्ति के द्वारा व्यक्ति अपनी जीवन–समस्याओं को सुलझाने का अपने ढ़ंग से प्रयास करता है और इस प्रकार अपनी निजी एवं अद्वितीय जीवन–शैली का निर्माण करने में सफल होता है। निजी जीवन–शैली के निर्माण का यह प्रयास मानव के शिशु–काल से ही प्रारम्भ हो जाता है। जबकि शिशु अपने कष्टपूर्ण पर्यावरण के विरुद्ध अग्रघर्षी व्यवहार अपनाता और अपनी विरोधी परिस्थितियों पर अपनी सत्ता स्थापित करने का प्रयत्न करता है। स्वभावतः ही आरम्भ में यह अग्रघर्षी व्यवहार रुदन के रूप में होता है, जो अवस्था के

विकास के साथ–साथ झगड़ों, प्रतियोगिताओं एवं सामाजिक तथा राष्ट्रीय संघर्षों का भी रूप ले लेता है।''[31] एडलर चेतन–अचेतन स्मृतियों को भी व्यक्तित्व–निर्माण के लिये महत्वपूर्ण मानते हैं। उसमें हीनता–ग्रन्थि और श्रेष्ठता–ग्रन्थि से अन्तर्द्वन्द्व की सृष्टि होती है। इससे मुक्ति हेतु वह आत्म श्रेष्ठता को प्रदर्शित करता है। एडलर एवं युंग के व्यक्ति मनोविज्ञान एवं विश्लेषणात्मक मनोविज्ञान के आधार पर हिन्दी उपन्यास लेखिकाओं ने नारी पात्रों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है।

'रुकोगी नहीं राधिका' की राधिका एक दुर्बल स्वभाव की भावुक नारी है। माता के देहान्त–पश्चात, राधिका की परवरिश पितृ–संरक्षण में होती है। वह अपने पितृ–स्नेह को एकनिष्ठ रूप से भोगना चाहती है। पिता के विद्या से पुनर्विवाह करने के कारण, उसके अन्दर संघर्षों का बवंडर उठता है। वह अपने पिता के प्रति विकर्षणा से भर उठती है। वह अपने कार्यों से, उन्हें आहत करना चाहती है। राधिका प्रतिशोध–भावना से, आक्रान्त हो उठती है। पिता को आहत करने और प्रतिशोध लेने की भावना से वह डैन के साथ विदेश जाती है। डैन राधिका के व्यवहार से असंतुष्ट हो कहता है, ''मैं तुम्हें रिजेक्ट नहीं कर रहा हूँ, मुक्त कर रहा हूँ। तुम्हें अपने साथ चलने के लिए इस कारण नहीं कहता, क्योंकि तुमने कभी, एक क्षण के लिए भी प्यार नहीं किया। राधिका, तुम मुझमें अपना पिता ढूँढ़ रही थी, वही पिता जिसे त्रास देने के लिए तुम मेरे साथ चली आयी थी। पर मैंने तुम्हारे पिता की जगह स्थापित होना नहीं चाहा, मैं तो स्वतंत्र व्यक्तित्व हूँ।.....और मैं तुममें अपना खोया यौवन ढूँढ़ रहा था। अपनी पत्नी को छोड़कर चले जाने की कडुवाहट धोना चाहता था, पर शायद हम दोनों ही सफल नहीं हुए।''[32] राधिका और डैन के

जीवन में कटुता आ जाती है। वह हताशावश स्वदेश लौटती है। राधिका अक्षय और मनीश के प्रति आकर्षित होती है। किन्तु अक्षय और मनीश उसे एकनिष्ठ प्रेम देने में असमर्थ हैं।

'जिन्दगीनामा' की फतेह शेरअली के प्रेम में अनुरक्त है। फतेह शेरअली का हाथ पकड़कर कहती है, ''तुम्हें सौंह है अल्लाह पाक की जो तू कौल से मुड़ा। तुम्हें मार डालूँगी। और आप दरिया में डूब मरुँगी।''[33] फतेह की श्रेष्ठता–ग्रन्थि अपने प्रियतम को पाकर ही संतुष्ट होती है।

'सूरजमुखी अंधेरे के' की रत्ती असद की प्रेयसी है। असद और रत्ती दोनों ही एक दूसरे के स्नेह–सागर में डूबते उतरते हैं। असद भी रत्ती के अनुराग में कहता है, ''हर छुट्टी में आता हूँ तो कुछ न कुछ बदला होता.....एक दिन तुम्हारे मामा–पापा की इजाजत से.....मगर नहीं.....उन्हें जरूर एतराज होगा।.....रत्ती मग्न सी हँस दी और असद की ओर बाहें फैलादीं।''[34] किन्तु विधाता ने उसकी प्रणय–लीला को समाप्त कर दिया। असद की मृत्यु हो गई और रत्ती की हंसी सदैव के लिए शान्त हो गई। रत्ती की कुंठाओं ने उसे हीन–ग्रन्थि के दंश को झेलते हुए असामान्य–नारी बना दिया है।

'एक इंच मुस्कान' की रंजना लेखक अमर की प्रेमिका है। वह विगत छः वर्षों से अमर के प्रति ही आसक्त है। रंजना अमर की अभिलाषा के समक्ष परिवार की भी उपेक्षा करती है। ''.....रंजना ने अमर के सामने कभी घर वालों की भावनाओं की चिन्ता नहीं की, न उनके दुःख की न उनकी नाराजगी की।''[35] रंजना अमर के इस स्नेहाधिकार को सम्पूर्ण रूप में पाना चाहती है। रंजना अमर से प्रणय में विभोर होकर

पूछती है, ''सूरज वहीं तो डूबा था न? मन करता है अभी जाकर निकाल लाएं। चलते हो?'' बच्चों जैसी सरलता और निरीहता से पूछकर रंजना खींचकर अमर को थोड़ा आगे ले आई।.....जानते हो, मेरा मन क्या करता है? मन करता है, पानी में आगे बढ़ती ही जाऊँ, बढ़ती ही जाऊँ.....और वहाँ पहुँच जाऊँ जहाँ समुद्र आसमान को छूता है, अपनी लहरों को बाँहों में समेट लेता है.....कैसा अद्‌भुत होता होगा उनका मिलन भी।''**36** अमर की परिणय –अस्वीकृत से रंजना का चेतन और अचेतन आहत हो उठे ''वह फूट–फूट कर रोने लगी। कालेज में बिताए दिन..... लम्बी–लम्बी बहसें साथ घूमना, हंसी मजाक,.....प्यार–दुलार और फिर दिल्ली में बिताए दो वर्षों के अनेक–अनेक चित्र उभर–उभर कर उसके मन को सालते हैं और जब मन की व्यथा असहाय हो गई तो दोनों हाथों की अंगुलियों को बिखरे बालों में बुरी तरह फंसाकर पागलों की तरह सिर को, तकिये पर पटक कर रंजना बोली ''नहीं–नहीं। मेरा कोई आत्म–सम्मान नहीं, कोई अहं नहीं मेरा तो अमर है.....केवल अमर है....केवल अमर है।''**37** रंजना अपनी मंदा भाभी को अपने अचेतन से अवगत कराने के प्रयास में विफल है, ''कैसे वह मंदा भाभी को समझाए कि उसे न सारी दुनिया चाहिए न दुनिया के अच्छे–अच्छे लड़के.....उसकी तो सारी दुनिया अमर ही है। वह केवल अमर की है, अमर की ही रहेगी.....अमर अपनाएगा, तब भी.....नहीं अपनाएगा तब भी .....। रंजना के मन का यह स्नेह, यह एकनिष्ठ आत्मसमर्पण उसकी उँगलियों से होता हुआ अमर तक पहुँच भी रहा था नहीं.....कौन जाने?''**38** रंजना इन्हीं पुलकित क्षणों में अमर की परिणीता बनती है।

'ये छोटे महायुद्ध' की गार्गी में संस्कारगत एवं परिस्थितिजन्य भावों का द्वन्द्व मिलता है। गार्गी संस्कार वश बहू के विचारों के प्रति समायोजन नहीं कर पाती। किन्तु परिस्थितियाँ उसे बहू के साथ रहने के लिए विवश किए हैं। संस्कार और आधुनिकता के द्वन्द्व के कारण छोटे–छोटे पारिवारिक झगड़े होते हैं। गार्गी संस्कारगत भावों को छोड़ना नहीं चाहती। गार्गी की बहू संस्कारगत भाव अपनाना नहीं चाहती। जिससे गार्गी को तनावग्रस्त जीवन–व्यतीत करना पड़ता है। वह इस तनाव और कुंठा से मुक्ति हेतु, आश्रम में शरण पाती है। किन्तु वहाँ भी मानसिक–द्वन्द्व से छुटकारा पाने में असमर्थ, गार्गी रुग्णावस्था से विह्वल दिखाई पड़ती है। अंततः गार्गी की पुत्री लोपा माँ को आश्रम से घर वापस लाती है।

'मीनारें' की प्राचार्य प्रेमा दीवान विविध परिस्थितिजन्य द्वन्द्वों की शिकार है। उसके समक्ष नित्य नूतन द्वन्द्व खड़े होते हैं। प्रेमा को कभी अधीक्षिका नियुक्ति का संघर्ष झेलना पड़ता है। तो कभी छात्रावास की समस्या, कभी छात्रों द्वारा परीक्षा–तिथि बढ़ाने की समस्या से जूझना पड़ता है। कभी उसे भ्रष्ट और अल्पशिक्षित व्यक्तियों के अनावश्यक हस्तक्षेप का सामना करते, विविध मानसिक एवं परिस्थितिजन्य द्वन्द्वों को सहन करना पड़ता है। लेकिन प्रेमा की रचनात्मक–शक्ति जीवन की समस्याओं को अपने ढ़ंग से सुलझाने का प्रयास करती है। प्रेमा अपनी निजी और अद्वितीय जीवन–शैली से सम्पूर्ण समस्याओं पर विजय पाती है।

'वाट हमारी' की सरदारनी को वैधव्य–कालीन संघर्षों का सामना करना पड़ता है। सरदारनी के व्यक्तित्व में विप्लव का दूसरा कारण, उसकी तीन पुत्रियों के हाथ पीले करना है। वह रात–दिन चिंतातुर दिखाई पड़ती है। वह अपनी पुत्री कंवल के परिणय के लिए प्रोफेसर से भी पूछती है कि वह ही उसे कोई वर बताए, ''प्रोफेसर

साहब तुसी ही दसो कोई मुंडा, असी तां भाल थके आं कोई मुंडा ईनी चजदा मिलदा कंवल लई.....।''[39] सरदारनी पति के देहावसान–पश्चात स्वयं को कमजोर पाती है। यदा–कदा वह परिस्थितियों–समक्ष हताश भी दिखाई पड़ती है। किन्तु उत्तरदायित्व के भाव का स्मरण आते ही उसमें पुनः शक्ति–संचरण होता है। इच्छा–शक्ति की प्रबलता ही उसे पुत्रियों के परिणय–दायित्व से उन्मुक्त कराती है। सरदारनी का चरित्र मनोविज्ञान सम्मत होते हुए भी आदर्श–प्रसूत है।

'हॅक दी मंग' की चंदी का वात्सल्य–भाव अद्‌भुत है। प्रारम्भिकावस्था में सुखान्त–क्षणों में वह अपने पुत्रों और बहुओं पर फूली नहीं समाती। उसके खुशी के भाव, उसके हृदयगत–प्रसन्नता और वात्सल्य का प्रकटीकरण करते हैं। किन्तु चंदी के पुत्र प्रीतम सिंह की निर्मम हत्या हो गई। उसकी बहू का भी देहान्त हो गया। इन विपदात्मक–परिस्थितियों में चंदी का हृदय विप्लव से आक्रान्त हो उठता है। उसका रुदन हृदय–विदारक है। चंदी ने अपनी पोती को व्याकुल हृदय से लगा लिया। चंदी पहाड़ सम दुःख को एक, ही घूँट में निगल कर कर्त्तव्य भाव–समक्ष अग्रसर होती है। वह बेटे और बहू की अकाल–मृत्यु की असहय यंत्रणा की त्रास दबाकर पोती की परवरिश करने लगती है।

'बलिदान' की बसंत की वैधव्य कालीन परिस्थितियाँ अत्यन्त विचित्र हैं। बसंत का जीवन–निर्वाह एक जटिल समस्या है। उसको पंच–वर्षीय पुत्र मनमोहन एवं एक वर्षीय पुत्री चरनजीत की परवरिश करनी पड़ती है। उसका वात्सल्य पग–पग पर पराजित और कुंठित होता रहता है। किन्तु वह कभी भी लुप्त नहीं होता। मनमोहन जब माँ की उपेक्षा करता है। तब माँ का हृदय विदीर्ण हो जाता है। पुत्र की उपेक्षा से उसको अपना जीवन निरर्थक सा प्रतीत होने लगता है। उसके जीवन के मृदु

स्वप्न–भंग हो जाते हैं। वह यह सोचकर प्रसन्न थी कि पुत्र के कारण, उसकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होगी। लेकिन उसकी आशा–विपरीत, मनमोहन ने दूसरा परिणय कर, माँ की भावना को आहत किया। इससे भी अधिक वेदना बसन्त को तब होती है, जब मनमोहन माँ से सम्बन्ध–विच्छेद कर अलग रहने लगता है। किन्तु माँ का वात्सल्य मनमोहन की कुशलता के विषय में व्यग्र है। वह मुंशी से मनमोहन के विषय में पूछती है। बसन्त तीर्थ–यात्रा के लिए जाती है। वह पुत्र की उपेक्षा से अत्यधिक हताश हो जाती है, ''प्रमातमा दे चरना दी सेवा करन जादिआं होइआं वी उह इस दुख नू महिसूस करनो ना रहि सकी।''**40** बसन्त के आत्मापमान और वात्सल्य के द्वन्द्व में वात्सल्य ही विजयी होता है। ''मनोविज्ञान वेत्ताओं ने वात्सल्य को अत्यन्त महत्वपूर्ण माना है। वह नारी का मूलभूत भाव है। यह एक ऐसा मनोभाव है। जिसकी इच्छा प्रत्येक दम्पत्ति के हृदय में रहती है।''**41**

'डाक्टर देव' की ममता की परिस्थिति अत्यन्त विकट है। ममता डाक्टर देव नारायण के अनुराग से अनुरंजित है। वह अपने प्रियतम को समर्पित है। उसे विवाह–पूर्व ही रंजू पुत्र की जन्मदात्री बनना पड़ता है। ममता का परिणय उसकी इच्छा–विरुद्ध जगदीश से हो जाता है। उसका अचेतन पुत्र रंजू के लिए व्याकुल है ''मेरा रंजू ''.....मेरा रंजू न जाने कहाँ हैं....आप समझते होंगे कि मैं शायद पागल हो गयी हूँ, मुझे हिस्टीरिया है, मुझे प्रसूति का कोई रोग है। मुझे कुछ भी नहीं है। मैं किसी रंजू की भाग्यहीन माँ हूँ।''**42** ममता को लोकापवाद से बचाने के लिए उसे अपने पुत्र रंजू को त्यागना पड़ता है। वह पुत्र रंजू के लिए अथाह बेबसी और वेदना के दंश को झेलती है। वह पुत्र रंजू को विस्मृत करने में असमर्थ है। वह एक पुत्री

को जन्म देती है और उसमें पुत्र का प्रेक्षपण कर, उसका नाम भी रंजू ही रखती है। किन्तु पुत्र–रंजू की विरह–विदग्धता से पीड़ित ममता अन्तर्द्वन्द्वों से जूझती, पति के गृह को त्याग कर, अध्यापन कार्य करती है। ममता अपने कष्टपूर्ण पर्यावरण के विरुद्ध अग्रघर्षी व्यवहार अपनाकर, अपनी विरोधी परिस्थितियों पर, अपनी सत्ता स्थापित करने का प्रयत्न करती है। वह हास्टल में रहकर, शिक्षण कार्य करके, अपने व्यक्तित्व को अपनी निजी शैली से निर्मित करती है। वह अट्ठारह–वर्षों पश्चात, अपनी पुत्री रंजू को देखकर अपना सम्पूर्ण दमित वात्सल्य लुटा कर प्रसन्नचित्त होती है।

'कोई नहीं जाणदा' की ठकुराइन माँ ठाकुर पृथ्वी सिंह की परिणीता है। वह पति के अवैधानिक कार्यों से सदैव दुखित रहती है। उसके दो पुत्र मलखान सिंह और चंदन सिंह हैं। चंदन सिंह के हाथों हत्या हो जाती है। उसे हत्याभियोग में दण्ड दिया जाता है। उसे फांसी की सजा सुनाई जाती है। ठकुराइन माँ पुत्र की सजा से अत्यधिक व्यथित है। वह पुत्र की रक्षार्थ विविध प्रकार की मनौतियाँ मानती है। वह पुत्र–वियोग के दंश से मानसिक संतुलन खो देती है। उसकी निन्द्रा–भंग हो जाती है। वह प्रतिगमन क्रिया द्वारा रात्रि में चंदन के पैरों की आहट सुनती है। वह पाँच दिन की पैरोल पर आए, पुत्र का विवाह त्रिवेणी से कर, रुढ़ियों के प्रति अनास्था दिखाती है। वह नवीन परम्पराओं की स्थापना कर, अपनी नूतन जीवन शैली की निर्मात्री है।

'उन्हां दी कहाणी' की रत्ना का परिणय राजू से होता है। ''मातृत्व रूप नारी जीवन का जन्मजात स्वाभाविक तत्व है। उसके जीवन की चरम सार्थकता उसके मातृत्व में ही है।''[43] रत्ना की गर्भावस्था में राजू उससे कहता है ''ओनू छोटा जिहा

राजू नहीं चाहीदा'' रत्ना गर्भ में शिशु की हलचल से प्रसन्नचित हो जाती है। रत्ना को जब यह स्मरण आता कि उसका तो कोई अपना घर ही नहीं होगा क्योंकि उनका जीवन तो खानाबदोश है। वह दूसरे ही क्षण इस कटुभाव की सत्यता से आक्रान्त हो उठती है। वह सोचती है कि क्या उसकी सन्तान आजीवन जंगलों में भटकेगी। वह इसी विचार से भयभीत हो उठती। रत्ना पुत्री बेला को शिक्षार्थ शहर भेजती है। रत्ना पुत्री के उज्जवल भविष्य के लिए विरह के क्षणों को भी सहने के लिए तत्पर है। पुत्री के लिए मातृत्व हृदय की व्याकुलता, रत्ना का रूदन, पुत्री के शुभ–समाचार जानने की उत्कंठा आदि मनोभाव, नैसर्गिक एवं सहज हैं।

'बुलावा' की सोफी को धनोन्माद के अधीन कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य, लोक–मर्यादा, संस्कार आदि का भी ध्यान नहीं रहता है। वह प्रियतम फैज से अधिक उसकी पगार पर मोहित है। फैज की प्रतिमाह 1000/– की आय है। वह फैज के धन–मोह के कारण गृह से पलायन करके, उससे परिणय करना चाहती है। फैज सोफी के मनोभाव से परिचित था। इसलिए वह चंचल और धन लोलुप–प्रवृत्ति की सोफी के विषय में सोचता है, 'सोफी एक जलता कोयला है, समय की हवा ने जिसे जला दिया है।'[44] सोफी पाश्चात्य–सभ्यता के मोहवश भारतीय संस्कारों को तिलांजलि देती है।

'धरती सागर ते सीपियाँ' की इकबाल की माँ बलात्कार से पीड़ित है। वह आर्थिक विपन्नतावश पिता की रुग्णावस्था पर, कपड़े धोने के लिए एक धनाढ़य के घर जाती है। वहाँ उसका शारीरिक उत्पीड़न होता है। वह अभिशापित जीवन जीने के लिए विवश है। उसके समक्ष एक तरफ जीवन–निर्वाह का आर्थिक प्रश्न तो दूसरी तरफ, पुत्र इकबाल के भरण–पोषण का दायित्व। ''नारी केवल माता है उसके उपरान्त वह जो कुछ है, सब मातृत्व का उपक्रम मात्र है। मातृत्व संसार की सबसे

बड़ी साधना, सबसे बड़ी तपस्या, सबसे बड़ा त्याग और सबसे महान विजय है।''[45] वह जब अम्मा बनती है। तब इकबाल की बातें करते वह ऐसी तल्लीन हो जाती जैसे धर्म ग्रन्थ का पाठ कर रही हो। वह कहती 'मेरा मजहब तो मेरा इकबाल है। मैंने पहले अपनी कोख से अपने मजहब को जन्म दिया और फिर अपने हाथों अपने मजहब को पाला और फिर अपने मजहब की पूजा करने लगी।'[46] लेखिका ने अत्यन्त असाधारण परिस्थितियों में माँ के इस उत्कट वात्सल्य का मार्मिक चित्र उपस्थित किया है। निराश्रिता अम्मा इकबाल के लिए विकट से विकट परिस्थितियों का सामना करती है। ''मैं इकबाल वास्ते हमेशा सजरी रोटी लाहंदी हुंदी सां, आप किसे वेले रात दी बही खा लेंदी सां, किसे वेले निरा चाह दा घुट भर छडदी सां..... ।''[47] अम्मा पुत्र को शिक्षित करने की अभिलाषा पाले है। वह इसकी पूर्ति के लिए कठोर परिश्रम करती है। इसके लिए उसे कई बार भूखे भी रहना पड़ता है। वह अपनी सभी भावनाओं का दमन कर, पुत्र के लिए सुख–सुविधाएं जुटाती है। अम्मा अपने जीवन की सम्पूर्ण परिस्थितियों को सहती है। जीवन–निर्वाह जहाँ एक जटिल समस्या हो, वहाँ माँ का वात्सल्य पग–पग पर कुंठित अवश्य हुआ है। लेकिन कभी भी लुप्त नहीं हुआ। अम्मा के मनोभावों का लेखिका ने अत्यन्त सहज और सजीव चित्रण किया है।

6-3 मनोविश्लेषण के प्रमुख नवीन सिद्धान्तों के आधार पर विशेषता : करेन हार्नी एवं ऐरिक फ्रॉम के सामाजिक तथा सांस्कृतिक सिद्धान्तों के आधार पर :

करेन हॉर्नी विल्हेलम राइक के विचारों से प्रभावित थी। फ्रायड के अन्तर्द्वन्द्वों की अभिव्यक्ति दमित भावों के बीच है। इसलिए फ्रायड ने इसे पूर्णतः वैयक्तिक स्तर की मान्यता प्रदान की है। करेन हार्नी ने फ्रायड की इस एकान्तिक

वैयक्तिकता का विरोध किया है। उनके अनुसार 'अपने पर्यावरण के साथ सामंजस्य करने की दिशा में व्यक्ति को अपनी सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों के कारण आन्तरिक संघर्ष की अनुभूति करनी पड़ती है।'[48] करेन हॉर्नी के मतानुसार 'इन संघर्षों का रूप, इनकी व्यापकता एवं सघनता हमारी सभ्यता एवं संस्कृति के विकास पर निर्भर करती है। स्थिर एवं परम्परा पुष्ट विकसित संस्कृति में निश्चित जीवन मूल्यों के कारण संघर्षों के अवसर अपेक्षाकृत कम होंगे, जबकि विकासमान अथवा तीव्र परिवर्तनशील संस्कृति में जीवन–मूल्यों की अस्थिरता के कारण उपलब्ध होने वाले परस्पर विरोधी मूल्यों एवं जीवन–पद्धतियों के परिणाम–स्वरूप संघर्षों की बहुलता एवं किसी एक मार्ग के निर्वाचन की कठिनता अपेक्षाकृत बहुत अधिक होगी।'[49] डॉ0 करेन हार्नी अन्तर्द्वन्द्वों को मानव जीवन का वरदान मानती हैं। उनके मतानुसार मानव इन अन्तरसंघर्षों का सामना करके उनका समायोजन कर आन्तरिक स्वतंत्रता और असीम शक्ति प्राप्त कर सकता है। इन अन्तर्द्वन्द्वों के अभाव में मानव जीवन निष्क्रिय एवं दुर्बल हो जाता है।

करेन हार्नी के मतानुसार इन अन्तर्द्वन्द्वों के परिणामस्वरूप व्यक्तित्व में तीन प्रकार के क्रान्तिकारी परिवर्तन हो सकते हैं। 1. व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के अभिमुख हो सकता है। 2. वह अन्य व्यक्तियों के प्रति आक्रामक रूप धारण कर सकता है। 3. वह उनसे पलायन कर सकता है। उनका मानना है कि एक ही व्यक्ति में तीनों प्रकार मिल सकते हैं लेकिन उसमें प्रधानता किसी एक की ही होगी। प्रथम प्रकार के व्यक्तित्व में सहिष्णुता विनम्रता, दैन्य, अधीनता एवं पर निर्भरता आदि की वृत्तियां विकसित होती हैं। दूसरे प्रकार के व्यक्तित्व में आत्म–उच्चता, क्रूरता, आक्रमण, संघर्ष पर शोषण एवं शत्रु भाव दर्शन की अधिकता होती है। तीसरे प्रकार के व्यक्तित्व से एकान्त प्रियता, संवेदनशीलता, आत्म–श्रेष्ठता एवं सबसे स्नेह आदि की वृत्तियां को बढ़ाती है।

एरिक फ्रॉम भी मानव के माानसिक विकास में सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश की महत्वपूर्ण भूमिका को स्वीकारते हैं। वह फ्रायड के इस मत से असहमत है कि काम–वृत्तियां ही मानव को सर्वाधिक सशक्ति वृत्तियां हैं। इनके दमन से मानसिक असंतुलन उत्पन्न होता है। एरिक फ्रॉम का मानना है कि 'सामाजिक एवं सांस्कृतिक–विकास द्वारा ही मानव व्यवहार के निर्देशक सिद्धान्त विकसित होते हैं जिनसे मानव मन में एक विशिष्ट जीवन प्रणाली से सम्बद्ध आकांक्षाएं एवं उनकी तृप्ति व्यक्त होती है।'[50] वह पर्यावरण के साथ सामाजिक प्रेम सौहार्द आदि गुणों को भी आवश्यक मानते हैं। इनके अभाव में उसमें ध्वंसात्मकता की वृद्धि होती है।

प्रेम, सौहार्द आदि गुणों के अभाव में समाज से सामंजस्य न कर पाने पर, व्यक्ति मानसिक रूप से पीड़ित हो उठता है। ये सुलझे अन्तर्द्वन्द्व मानव को मानसिक रूप से पीड़ित करते हैं। ऐसी स्थिति में उसमें पलायन वृत्ति उत्पन्न होती है। जिससे चार प्रकार की प्रक्रियायें होती हैं। (1) 'स्वपीड़ा रति', (2) 'पर पीड़ा रति', (3) ध्वंसात्मकता, (4) अनुरूपता। 'स्वपीड़ा रति' की प्रक्रिया में व्यक्ति स्वयं को हीन व अयोग्य समझता हुआ अपने को स्वयं ही पीड़ित करता है और दूसरों से भी पीड़ित कराना चाहता है। 'पर पीड़ा रति' में वह दूसरों को अपने अधीन करना, उनका शोषण करना अथवा उन्हें पीड़ित करना चाहता है। 'ध्वंसात्मकता' में वह व्यक्ति अथवा समाज का संहार करने में ही सुखानुभव करता है। 'अनुरूपता' में वह स्वयं को अपनी इच्छापूर्तिकारक अन्य व्यक्ति के अनुरूप बनाना चाहता है।'[51]

करेन हार्नी एवं एरिक फ्रॉम के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का निष्कर्ष यह है कि व्यक्ति जब सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों से समायोजन नहीं कर पाता तब अन्तर्द्वन्द्वों की उत्पत्ति होती है। इन अन्तर्द्वन्द्वों के परिणामस्वरूप व्यक्ति की विभिन्न प्रतिक्रियाएं व्यक्त होती हैं। जो समाज के प्रति अभिमुख, आक्रामक तथा पलायनवादी हो सकती हैं। ऐरिक फ्रॉम के अनुसार व्यक्ति स्वयं को शक्तिहीन एवं एकाकी समझता है। परिणामस्वरूप उसमें पलायनवादी–प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। जिससे चार प्रकार की प्रक्रियायें हो सकती हैं–स्वपीड़ा रति, पर पीड़ा रति, ध्वंसात्मकता एवं अनुरूपता। करेन हार्नी एवं एरिक फ्रॉम के सामाजिक तथा सांस्कृतिक सिद्धान्तों के आधार पर हिन्दी–उपन्यास लेखिकाओं ने नारी पात्रों के मानसिक संघर्षों, प्रेरणाओं का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है।

'सुरंगमा' की विनीता दिनकर पांडे की परिणीता है। दिनकर पांडे का अचेतन सुरंगमा के अनुराग से अनुरंजित है। वह दमित प्रेम की कुंठा से रुग्णावस्था में पहुँचता है। भारतीय संस्कारों की साम्राज्ञी विनीता पति की एक मात्र अधिकारणी है। उसकी सामाजिक परिस्थितियाँ और संस्कार कभी भी सौत की कल्पना नहीं कर सकते। वह पति की प्रेयसी कौन है? यह जानने के लिए अथक प्रयास करती है। विनीता को जब ज्ञात होता है कि उसके पति की प्रेयसी सुरंगमा है फिर तो वह एक चोट खायी नागिन सी क्रुद्ध हो उठती है। वह सुरंगमा को डांट–फटकार लगाती है और पुनः भविष्य में दिनकर पांडे से दूर रहने की चेतावनी देती है। विनीता परिस्थितियों के कारण सुरंगमा के प्रति अपना आक्रामक रूप दिखाकर अपने पति की एक मात्र साम्राज्ञी रहना चाहती है।

'उसका घर' की रेशमा की कथा जटिल एवं सघन है। रेशमा के जीवन में कई पुरुष आते हैं और रेशमा से लैंगिक वृत्ति की संतुष्टि कर चले जाते हैं। रेशमा अपने जीवन में आने वाले पुरुषों की वासनात्मक प्रवृत्ति के साथ ही अपने प्रतिशोध का विश्लेषण करते अपनी सखी ऐलमा से कहती है ''ऐलमा औरत प्यार के लिए भटकती है पर उसे प्यार नहीं मिलता।'' मैंने कितने मर्द बदले हैं, पर क्या उन्होंने मुझे प्यार दिया? नहीं, सब शरीर का सुख चाहते हैं।''**52** रेशमा सच्चा प्रेमी चाहती है। परन्तु उसे पुरुषों में वासनावृत्ति की गंध प्राप्त होती है। रेशमा का प्रतिरोधी मन पुरुष वर्ग के प्रति विद्रोही बन जाता है। इसलिए वह प्रत्येक पुरुष को संदेहात्मक दृष्टि से देखती है। वह पुरुष वर्ग के प्रति पर पीड़ा रति भाव में अपनी तुष्टि पाती है।

'रतिविलाप' की अनुसूया सामाजिक परिस्थितियों और संस्कारगत वृत्तियों के परिणामस्वरूप अनुरूपता को अपनाती है। वह वैधव्यावस्था में आर्थिक नियोजन–शक्ति से अपनी दुर्बल मनोवृत्तियों पर विजय पाती है। पूँजीवादी व्यवस्थानुरूप वह बाम्बे में इन्द्रधनुष बुटीक का व्यापार करके आर्थिक जगत में अपना लोहा मनवाती है। आर्थिक स्थिति की सुदृढ़ता से उसके हृदय की उदारता और अधिक विकसित होती है। वह पतिहन्ता हीरा को अपने गृह में शरण देती है। धन–लोलुप हीरा अनुसूया के श्वसुर को अपने प्रेम जाल में फंसा लेती है। कुछ समयान्तराल में वह उसका धन समेट उसकी हत्या कर देती है। अनुसूया को परिस्थितियाँ सबल बनाती चलती हैं। वह श्वसुर का भी पुत्रवत् स्वयं ही दाह–संस्कार करती है। वह श्वसुर हन्ता हीरा को अपनी उदारता से क्षमादान देकर परिस्थितियों पर विजय पाती है।

'स्वामी' की मिनी प्रेयसी और पत्नी के कर्तव्य–भावों के अन्तर्द्वन्द्व में जूझती रहती है। वह नरेन्द्र की प्रेयसी है और घनश्याम की परिणीता। घनश्याम सरल और उदार व्यक्तित्व का पुरुष है। मिनी भयभीत थी कि कहीं उसका पति मधुयामिनी में उससे जोर–जबरदस्ती न करें। किन्तु ''जोर–जबरदस्ती की बात तो दूर एक हल्का सा आग्रह तक नहीं। एक गहरा निःश्वास उसके कलेजे से निकल गया। लगा जैसे एक बहुत बड़ा बोझ था जिससे मुक्त हो गई। पर यह क्या? अपमान–बोध की कौन सी चुभन उसके मन को भेध रही है? इतनी उपेक्षा! अभी तक मन में केवल घृणा थी। अब क्रोध भी उफनने लगा। मन की सारी भावनाएं, मन का सारा आवेग आँसुओं में फूट पड़ा। आज नरेन्द्र के साथ उसकी सुहागरात होती तो.....जाने कितने मधुर चित्र आँखों के सामने उभरने लगे.....किसी की हथेलियों में थमें हुए अपने चेहरे के बहुत–बहुत निकट उसने किसी का चेहरा महसूस किया और मन पुकार उठा ''तुम कहाँ हो नरेन.....मुझे यहाँ से ले जाओ। इस हुए को अनहुआ कर दो।''[53] मिनी वैवाहिक जीवन में समायोजित होने में असमर्थ थी। ''वह न इस घर से जुड़ पा रही है, न घरवालों से, मन करता है, चुपचाप इस कमरे में ही बैठी रहे। अपने अतीत से चिपकी–चिपकी ही अपना वर्तमान काट दे।''[54] मिनी का यह अन्तर्द्वन्द्व दिन–प्रतिदिन बढ़ता ही गया। घनश्याम के सद्‌गुणों से मिनी के मन का संघर्ष शनैः–शनैः कम होता गया। पहली बार जब उसने पति का चेहरा इतने निकट से देखा ''.....कैसी सौम्य आभा और निर्मल हंसी आक्षेप, आरोप, उलाहना या व्यंग्य कहीं भी तो कुछ नहीं।'' सहसा मिनी के सुप्त संस्कार जाग्रत होते हैं।

उसकी पत्नीत्व–कर्त्तव्य के प्रति चेतना जाग्रत होती है। वह घनश्याम के प्रति घर के अन्य सदस्यों की अपेक्षा से आक्रामक हो उठती है। ''वह रात दिन इस घर के लिए खटता है, पर उसके लिए दो क्षण भी खटने को कोई तैयार नहीं.....अनायास ही उसकी आँखों में आँसू आ गए। नहीं घर वालों के इस अन्याय को वह अब एक दिन भी बर्दाश्त नहीं करेगी।''[55] संस्कार–वश मिनी पति की उपेक्षा के लिए स्वयं को भी दोषी मानती है। अंततः पति के प्रति समर्पण में उसके अन्तर्द्वन्द्वों का समापन होता है ''भावावेग के कारण पत्ते की तरह थरथराती हुयी उसकी देह अवश होकर स्वामी की बाँहों में जा गिरी और दो भुजाओं की जकड़ में उसे लगा, सारी भटकन समाप्त हो गई है, सारे द्वन्द्व समाप्त हो गए।''[56]

मन्नू भण्डारी ने मिनी के अन्तर्द्वन्द्वों का सहज और स्वाभाविक चित्रण किया है। संघर्षों से जूझती, भटकती मिनी को अन्ततः संस्कारों के समक्ष नतमस्तक होने में ही मुक्ति प्राप्त होती है। उसके सारे मानसिक द्वन्द्व, पीड़ा, आक्रोश सब लुप्त हो जाते हैं और वह एक आदर्श पतिव्रता नारी बन अपने संस्कारों की विजय पताका फहराती है।

'शेष यात्रा' की अनुका प्रणव की परिणीता है। प्रणव में स्त्री लोलुप–प्रवृत्ति प्रखर है। वह अनुका को हमेशा उपेक्षित एवं प्रताड़ित करता है। अनुका परिस्थिति एवं पति की प्रताड़ना से दिन–प्रतिदिन सहिष्णुता की शक्ति का संचयन करती है। प्रणव उसका परित्याग कर देता है। अनुका पति के समक्ष अनुरोध करती है कि ''मैं कुछ नहीं माँगूगी बस आप मुझे साथ रख लें मुझे अलग न करें।''[57] अनुका के इस

कथन से उनके व्यक्तित्व की अपरिपक्वता का प्रकट होती है, किन्तु जब वह पति–परित्यक्ता होकर, स्थितियों का सामना करते हुये अपनी सामाजिक और आर्थिक स्थिति सुदृढ़ कर लेती है, तब प्रणव को भी अनुका की प्रगति से ईर्ष्या होती है। वह दो बार अनुका से मिलता है और दोनों ही बार अनुका की उन्नति देख कर आहत होता है। लेखिका ने अनुका को प्रारम्भ में एक दुर्बल नारी के रूप में चित्रित किया है। जो पति के दुराचार और अत्याचार को चुपचाप सहन करती है, किन्तु पति से विलग होने पर परिस्थितियों ने उसे एक साहसी नारी बना दिया है। वही अनुका बड़ी सहिष्णुता से प्रत्येक परिस्थिति का डट कर सामना करती है। उसकी उन्नति से प्रणव भी पराजित हो जाता है।

'सीढियाँ' की शारदा का परिणय सुकेत से होता है। सुकेत अपनी आश्रयदात्री डॉ0 मनीषी के प्रति अनुरक्त है। शारदा परिस्थितियों से भली–भाँति परिचित होकर, उन्हें अपने अनुकूल बनाने का प्रयास करती है। वह पति सुकेत को अपने स्नेह–सागर में डुबो कर, उसको अपने वश में कर लेती है। शारदा ने शनैः–शनैः सुकेत के मन से मनीषी के प्रति आकर्षण को समाप्त कर दिया। सुकेत भी शारदा के अधिकारों के प्रति सजग हो जाता है। वह मनीषी से कहता है, ''शारदा हमारे घर में आयी है, उसकी अपनी भावनाएं अपने विचार हैं। कुछ पूछती है तो बता दो, आखिर हिसाब–किताब तो तुम्हारे पास होगा ही, हो सकता है कुछ तुम्हारा ही लेना निकल आये।''[58] शारदा एक ऐसी नारी है जो धैर्य से प्रतिकूल परिस्थितियों को भी अनुकूल बनाकर अपने दाम्पत्य–जीवन को सुखमय बनाती है।

मानव के क्रिया–कलापों एवं व्यवहार द्वारा ही उसके मन की स्थिति का उद्‌घाटन होता है। वास्तव में मन ही वह केन्द्रस्थल है, जहाँ से प्रत्येक वस्तु का आरम्भ होता है। मानव–व्यवहार उसकी मानसिक दशाओं से प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से नियंत्रित रहता है। मनोविज्ञान के माध्यम से मन का विश्लेषण होता है। इस प्रकार मनोविश्लेषण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से मानव मन के अध्ययन में सहायता मिलती है। पंजाबी उपन्यास लेखिकाओं ने भी करेन हार्नी एवं एरिक फॉम के मनोविश्लेषण के प्रमुख नवीन सामाजिक तथा सांस्कृतिक सिद्धान्तों के आधार पर नारी पात्रों के विभिन्न संघर्षो, प्रेरणाओं एवं उनकी प्रतिक्रियाओं का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है।

'आल्हणा' की जमना जीवन के प्रति आकर्षित है। वह मन में अनेक सुनहरे स्वप्नों को संजोए है। वह जीवन के प्रति अनुरक्त होने के कारण–अन्यत्र विवाह भी नहीं करना चाहती। जमना के पिता उसकी इच्छानुरूप उसका परिणय जीवन से कर देते हैं। जमना और जीवन का दाम्पत्य–जीवन सुखमय था कि उसके पिता का देहान्त हो जाता है। जमना के गाँव वाले उनके परिणय के विरुद्ध थे। अतः वे उसकी फसलों को नष्ट कर, उससे सामाजिक सम्बन्ध–विच्छेद कर लेते हैं। सामाजिक परिस्थितियों को प्रतिकूल देखकर, जीवन सेना में नौकरी करने को विवश होता है। जमना का जीवन नितान्त एकांकी हो जाता है। उसे पति की वियोगावस्था असह्य है। वह पति–वियोग में दिन–प्रतिदिन क्षीणकाय होती चली जाती है। वह परिस्थितियों से समायोजन करने में असमर्थ है। पुत्र तेज के प्रति भी उसका वात्सल्य शिथिल होता जाता है। अंततः परिस्थितियों से उत्पन्न क्षोभ को सहने में सक्षम जमना का देहावसान हो जाता है।

'जेबकतरे' की रिक्की अपने कालेज–मित्र कपिल के प्रति अनुरक्त है। रिक्की के माता–पिता उस पर कठोर अनुशासन लगाते हैं। वे उसे कपिल से मिलने की अनुमति नहीं देते। रिक्की कपिल से छिपकर मिलती है और कहती है, ''मेरे समझे क्या बनेगा मेरे माँ–बाप नहीं समझते। हालाँकि यह सीधी–सी बात है कि बच्चे की सोशलाइजेशन के लिए दोनों एक्सट्रीमली इंपाटेन्ट होते हैं। मेरी उमर के किसी को वे मुझसे मिलने नहीं देते इस कमी को वे चीजों से पूरा करना चाहते हैं....।''[59] रिक्की को कपिल से मिलने पर प्रतिबन्ध आहत करता है। वह माता–पिता के प्रति आक्रोशित होती है। वह कपिल के साथ डांस करती है। रिक्की अपने सम्पूर्ण मन से कपिल को चाहती है। उसके मन की एक ही इच्छा है कि वह अपना जीवन साथी कपिल को ही बनाए, किन्तु जब विवाह का प्रश्न उठता है तब रिक्की के माता–पिता उसका परिणय कपिल से न करके अन्यत्र कर देते हैं। रिक्की अपने पति को स्वीकारने में असमर्थ है। वह परिस्थितियों से समायोजन भी नहीं कर पाती। वह विवाहोपरान्त अपने प्रियतम कपिल से मिलती है ''.....अभी अचानक, यह एक दिन मुझे अपनी जिन्दगी में से चुराने का मौका मिला है। मैंने इसकी चोरी कर ली है।''[60] वह कपिल से पवित्र और सच्चा स्नेह करती है। उसके प्रणय में अनन्यता है। वह विवाहपूर्व प्रणय–ग्रन्थि के कारण पति को तन तो अर्पित कर देती है किन्तु मन अर्पित करने में असमर्थ है। अंततः रिक्की परिस्थिति–समक्ष पराजित होती जाती है। यद्यपि वह परिस्थितियों से समायोजन करने में प्रयासरत रहती है। किन्तु वह असफल सिद्ध होती है। सम्पूर्ण उपन्यास में अमृता प्रीतम ने रिक्की के

उद्वेलन–पूर्ण जीवन की छवियाँ प्रस्तुत की हैं। अतः रिक्की के जीवन में विचारों और संवेदनाओं की प्रधानता है। रिक्की अपनी परिस्थितियों और संवेदनाओं के प्रतिकूल होकर शनैः–शनैः दुर्बलता की शिकार होती है।

'इक सी अनीता' की अनीता विवाहित नारी है। वह सागर के प्रति अनुरक्त है। ''उन्नयन एक वह अचेतन प्रक्रिया है। जिसके द्वारा काम–आवेश (सेक्सुअल इम्पल्स) या उसकी शक्ति अर्थात् प्रगति या प्रवाह की दिशा को बदला या मोड़ा जाता है। जिससे वह किसी ऐसे कार्य में व्यस्त हो जो विशुद्ध कामज न हो और समाज द्वारा स्वीकृत तथा मान्य हो।''**61**

अनीता सागर के प्रेम में तल्लीन रहती है। वह उसी के ध्यान में खोई रहती। उसकी निद्रा गायब हो गई ''फिर नींद भी उसके पास मिन्नतें करवाने लग पड़ी थी.....फिर अनीता ने जिद में आकर नींद की गोली खानी शुरू कर दी.....।''**62**

अनीता ने फिर एक वैकल्पिक अनीता को बनाया। दोनों अनीता एक ही जान हो गईं। दोनों एक दूसरे के सुख–दुःख में शामिल होतीं। ''भाव या मनोविकार (इमोशन) व्यक्ति की उसके हित को प्रभावित करने वाली परिस्थिति के प्रति प्रतिक्रिया है। यह व्यक्ति की क्षुब्ध दशा है।''**63**

अनीता ने दूसरी अनीता की प्रतिमूर्ति बना परिस्थितियों से समायोजन कर लिया। वह सागर के बुझे हुए सिगरेट को जलाकर, सिगरेट के धुएं से सागर की श्वासों को महसूस कर तुष्ट होती। उसमें प्रेमी का सानिध्य अनुभव करती है। अनीता अपनी सखी बाली से कहती है, ''मैं सच कहती हूँ....बाली! अगर मुझे इस

दुनिया में इकबाल न मिलता तो मुझे मानस–मेल के शिखर का ही पता नहीं लगता, मैंने कल्पना की दुनिया में जीना था और मर जाना था।''[64] अनीता प्रतिकूल परिस्थितियों में भी समायोजन का मार्ग खोज लेती है। वह अपने प्रतिरूप की दूसरी अनीता बनाकर, उससे अपना सुख–दुख बाँटकर, मनोभाव व्यक्त कर लेती थी। इस नूतन मार्ग की प्रक्रिया से अनीता ने स्वयं को नियंत्रित रखा। यद्यपि कहीं–कहीं उसका व्यक्तित्व संश्लिष्ट होता अवश्य दिखाई देता है तथापि वह अपने मनोभावों को नियंत्रित रखने में सफल सिद्ध होती है।

'इक सवाल' की रेखा जगदीप के प्रणय में अनुरंजित है। जगदीप रेखा से पहले एक मुस्लिम स्त्री नूरां के प्रेम में अनुरक्त है। रेखा अपने प्रियतम की प्रेमिका के बारे में जानती है। रेखा जगदीप की प्रेयसी नूरां के प्रति ईर्ष्या–भाव न रखकर, नूरां बनकर, जगदीप को सम्पूर्ण रूप में पाना चाहती है। वह जगदीप से कहती है, ''आपणे पिंड दे चुबारे विच बैठ के तुसां नूरां दी तस्वीर बनाई सी.....ओहने सतारिआं वाली चुन्नी लई सी–मैं उहो सतारिआं वाली चुन्नी लवांगी.....ॲज तुॅसी फुलां नू आखो मेरी मंजी उते डिगण। ऐने–ऐने फुल्लां दी कबर बण जावे ते मैं।''[65]

रेखा के इस कथन से उसके मनोभावों की झलक स्पष्ट दिखाई देती है। वह जगदीप की प्रेयसी नूरां बनकर, उसके ह्रदय की साम्राज्ञी बनना चाहती है। वह चाहती है कि जगदीप उसमें और नूरां में अन्तर न समझे। नारी–मनोविज्ञान अपने प्रेम का विभाजन कभी स्वीकार नहीं कर सकता। रेखा अपने प्रेम को पूर्ण रूपेण प्राप्त करना चाहती है। रेखा अपनी परिस्थितियों के अनुकूल स्वयं को परिवर्तित कर अपने प्रणय में सफलता पाती है।

'रंग दा पत्ता' की कैली का परिणय लखे से होता है। लखे हृदयहीन और धनलोलुप प्रवृत्ति का पुरुष है। ''नर–नारी का सहज आकर्षण अनादि काल से चला आ रहा है। समाज में ही नहीं, साहित्य में भी यथार्थ में ही नहीं, कल्पना में भी नारी का साहचर्य पुरुष के लिए सुखद अनुभूतियों का स्त्रोत रहा है। पुरुष की कल्पना नारी में सर्वाधिक आनन्द प्राप्त करती रही है।''**66** कैली का पति उसकी कल्पना के विरुद्ध है। वह परिस्थितियों से समायोजन करने का निरन्तर प्रयास करती है, लेकिन पति की उपेक्षा और हृदयहीनता से उसे निराशा मिलती है। वह दीपक के प्रति आकर्षित होती है। उसका यह आकर्षण शनैः–शनैः अटूट प्रेम में परिवर्तित होता है। लखे की प्रताड़ना तो उस समय सीमाओं के प्रतिबन्धों को तोड़ती है जब वह बीस हजार में कैली को एक बीमा कर्मचारी से दाँव पर लगा देता है। कैली शराब की बोतल का प्रहार कर अपनी अस्मिता की रक्षा करती है। वह इस विकट परिस्थिति में प्रेमी दीपक के यहाँ शरण लेती है। वह परिस्थितियों के अनुकूल दीपक से परिणय कर, सदैव के लिए लखे से मुक्त हो जाती है। कैली का साहस धैर्य और परिस्थिति–अनुरूप समायोजन अत्यन्त सराहनीय है।

'रंग दा पत्ता' की मित्तरो कैली की सखी है। वह बख्शे के अनुराग से अनुरंजित है। मित्तरो का प्रियतम विपन्न है। मित्तरो प्रेम से अधिक धन को महत्व देती है। मित्तरो की अंतरंग सखी कैली कहती है, ''तेरा दिल काहेदा बणिआं होइआ ऐ मित्तरो। लोहे दा कि पत्थर दा?''.....सोने दा.....।''**67** मित्तरो धनलोलुप है इसलिए वह निर्धन प्रेमी बख्शे की उपेक्षा कर अन्यत्र परिणय कर लेती है। मित्तरो के अचेतन में प्रियतम के प्रति दमित प्रेम–भाव उसे धिक्कारते हैं। उसे रह–रहकर

प्रियतम की स्मृति सालती है। वह दाम्पत्य–जीवन और परिस्थितियों से समायोजन करने में अक्षम है। वह प्रेम–वेदना की टीस को सहने में असमर्थ है। वह विक्षिप्त सी दिखाई देती है। अंततः प्रियतम बख्शे के मिलन से वह सामान्यावस्था को प्राप्त करती है।

'कोई नहीं जाणदा' की गंगा, त्रिवेणी की माँ है। गंगा अत्यधिक विपन्न परिवार की है। लेखिका ने उसकी विपन्नता जनित घुटन, कुंठा, दर्द, आह और कराह तथा विषम परिस्थितियों में निर्मित उसके व्यक्तित्व का सफल संयोजन किया है। गंगा परम्परित पारिवारिक वातावरण से घिरे रहने के कारण अपनी आन्तरिक इच्छाओं को आदर्श–वेदी पर अर्पित कर देती है। चंदन सिंह के हाथों कत्ल हो जाता है। उस पर पुलिस पाँच हजार का इनाम घोषित करती है। एक पुलिस वाला त्रिवेणी की अस्मिता को खण्डित करना चाहता है। चंदन सिंह त्रिवेणी की उससे रक्षा करता है। चंदन सिंह त्रिवेणी की माँ गंगा से कहता है कि 'वह थाने में खबर कर दे और मेरे सिर पर लगे पाँच हजार रूपये इनाम के ले ले। यह सुनकर गंगा के मुख से अनायास ही निकला, ''हाय राम.....उसने कानों पर हाथ रख लिए कहने लगी यह तो सुनते ही मुझे पाप लगता है पुत्र। तुम्हें बेचकर उस रूपये की रोटी खाऊँ।''**68** वह रूदन करते कहती है, ''नहीं पुत्र यह मैं नहीं कर सकती.....तुमने बेटी की इज्जत बचाई है, तुम्हें कैसे थाने में दे दूँ।''**69** गंगा भारतीय संस्कारों के प्रति आस्तिक है। उसके संस्कार विकट से विकट परिस्थितियों में भी उसका साथ नहीं छोड़ते। लेखिका ने गंगा की विपन्नता–वेदना का उदात्तीकरण करके जैसे उसके जीवन की समस्या का एक रूचिकर समापन कर दिया है।

'आल्हणा' की राजवन्ती के पुत्र रवि का पूस–माह में देहान्त हो जाता है। वह पुत्र की मृत्यु–शोक से विह्वल है। पूस–मास के साथ उसकी कटु स्मृतियों का जुड़ाव है। जो उसे आहत करता है। वह इन प्रतिकूल परिस्थितियों को अनुकूल बनाने के लिए, एक अनाथ तेज को गोद लेती है। वह तेज को पुत्र सा स्नेह देकर उसका भरण–पोषण करती है। वह अस्पताल की एक सप्ताह की अनाथ बेटी को अपनी पुत्री वीणा के साथ स्तन पान करवा कर अपनी प्रतिकूल परिस्थितियों को अनुकूल बनाकर, अपनी सहृदयता का परिचय देती है।

'अगनी परिख्आ' की मनदीप की माँ अपनी इकलौती पुत्री मनदीप के लिए वात्सल्य और ममता से ओत–प्रोत है। प्रत्येक मातृ–हृदय अपनी संतान के प्रति ममता–भाव रखता है। वह अपनी संतान के सुख–दुख से अभिभूत होती है। मनदीप की सगाई टूटने पर वह रूदन करती है। वात्सल्य की स्निग्ध–सलिला में प्रवाहित होता हुआ माता का हृदय पुत्री की परिणय–बेला की विरह–वेदना की कल्पना–मात्र से ही कम्पित हो उठता है। मनदीप की विदाई–बेला पर माँ का कलेजा मुँह को आ रहा था। परिस्थितियों ने माता को भी सुदृढ़ बना दिया। वह मनदीप के सुखद दाम्पत्य–जीवन की प्रतिक्षण कामना करती है। मनदीप की माँ त्याग, कर्त्तव्यनिष्ठता, उदारता, धैर्य आदि गुणों से सम्पन्न है।

'बलिदान' की इन्दरा मनमोहन की परिणीता है। उसके व्यक्तित्व–निर्माण में परिस्थितियों और उसकी कुरूपता का अत्यधिक प्रभाव है। कुरूप इन्दरा को मधुयामिनी की रात्रि ही पति का तिरस्कार सहना पड़ता है। वह अपनी परिस्थिति से जूझने का समाधान खोजती है। वह डाक्टर बन समाज–सेवा करती है।

हैजा–महामारी में वह मरीजों के कै और दस्त अपने हाथों से साफ करती है। उसने एक तेरह वर्षीय लावारिस बच्चे की लाश को उठाया, ''उसदा जिसम कैआं ते दसतां नाल भरिआ होइआ सी। इन्दरा ने उसनू साफ तां कर लिआ।.....बच्चे नू साडण तो चमिआरां ने वी इन्कार कर दिता .....आखर उसने अपणी नरस नूं किहा.....लकड़ीआं इधरों उधरों इकटीआ कर लैंदे हां।.....''[70] इस प्रकार इन्दरा परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाने में विफल होने पर एक नूतन–मार्ग, 'उदात्तीकरण' को अपना कर, एक आदर्श प्रस्तुत करती है।

6-4 **निष्कर्ष-**

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी–पंजाबी उपन्यास नये–नये विषयों पर लिखे गये जिनमें आधुनिक जीवन की गहराई और विस्तार को प्रतिबिम्बत करने का प्रयास किया गया है। शशि प्रभा शास्त्री के 'नावें' उपन्यास में पुत्री नीलिमा अपनी माता को पत्र के मध्य से कर्तव्य की प्रेरणा देती है ''मैं तुम्हें सुखी देखना चाहती हूँ अम्मी शायद हर सन्तान अपने माता–पिता के माध्यम एक स्वाभाविक, सुखद और संतुलित संबंध देखना चाहती है। अब अपने लिए न सही, सिर्फ अप्पा जी की खातिर ही, उनके प्रति अब तक के अपने व्यवहार के प्रायश्चित स्वरूप ही, तुम एक नई जिन्दगी की शुरूआत करोगी, तो अम्मी तुम्हारी बेटी को बेहद खुशी होगी, जिसकी खुशी के लिए तुम अब तक अपनी हर खुशी न्यौछावर करती रही हो।''[71] नीलिमा एक साहसी पुत्री है जो अपनी माता को कर्तव्य बोध कराने का साहस रखती है। यह एक नूतन विषय है कि एक आत्मजा अपनी जन्मदात्री को दायित्व बोध कराती है और उसे पूर्ण करने के लिए प्रेरित करती है।

अमृता प्रीतम के उपन्यास कच्ची सड़क की मीना को एक स्मगलर अपना परिचय देकर कहता है कि वह उसका पिता देशराज मलिक है। मीना भावानात्मक प्रतिक्रियाओं स्वरूप उसे अपना पिता समझ उसके साथ लन्दन जाती है। वहाँ वह फिल्म देखते हुए ''सोचती रही–मेरी हथेली में भी दिल्ली की, बम्बई की और लन्दन की सारी–सरहदें, लकीरों की तरह पड़ी हुई हैं तो लन्दन मेरा है, अगर दलीप दिल्ली है तो दिल्ली मेरी है.....दूर देशों की घटनाएं भी कब किसी जगह पर और कैसे रिलमिल जाती हैं। मीना जिन्दगी की हैरानी को सामने पर्दे पर भी देखती रही और भीतर अपने मन में भी। लगा–वे दोनों भी आगे–आगे दौड़ रहे हैं, और कानून पीछे–पीछे लगा हुआ है.....जिसे पापा कह रही हूँ, कानून उसे पापा नहीं कहने देता.....[72] मानसिक संघर्षो से जूझती मीना से स्मगलर राणा एक पुस्तक में हीरे रखकर स्मगलिंग करवा लेता है किन्तु मीना इस रहस्य से अनभिज्ञ है। भावनात्मक संवेगों की स्मगलिंग एक नूतन विषय है, जिसकी अमृता प्रीतम ने स्वाभाविक एवं मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति की है। 'पक्की हवेली' की उर्मि चाची की बेटी है। पापा और चाची के सम्बन्धों से जन्मी उर्मि को जब वास्तविकता ज्ञात होती है तब वह विविध अन्तर्द्वन्द्वों से जूझती है। आन्तरिक द्वन्द्व उसे ज्वर से त्रसित कर देता है, वह इससे अचेत हो जाती है। अचेतनावस्था में उसकी मानसिक पीड़ा मुखरित हो उठती है। वह अर्द्धचेतनावस्था में बड़बड़ाती है ''फिर सिपाही आ गए.....बहुत से सिपाही..... चाची आगे–आगे दौड़ती थी सिपाही पीछे–पीछे.....चाची.....नहीं माँ.....नहीं.....माँ नहीं.....फिर वह काके के पास आई और चारपाई पर से काके को उठाकर दौड़ गई. .....काका रोए जाता है.....फिर एक सिपाही ने उससे काके को छीन लिया.....पापा

काके को चुप करा रहे हैं.....हाय मेरी बांह में सुई न चुभाओ.....नहीं, यह दवाई नहीं पिऊंगी.....कड़वी जहर.....इसमें जहर है.....।''[73] अमृता प्रीतम ने आधुनिक जीवन की पृष्ठभूमि में नारी–मन की परतें खोल कर नारी–चरित्र की समग्रता प्रतिबिम्बित की है।

अन्ततोगत्वा हिन्दी महिला उपन्यासकारों ने नारी को भारतीय सनातनी तत्व के मूल रूप में प्रस्तुत किया है। पंजाबी महिला उपन्यासकारों ने प्रेम की स्वतंत्रता पर नारी के चरित्र को निर्मित किया है। उनके नारी पात्र अत्यन्त ही यथार्थवादी एवं स्वतंत्र है। अमृता प्रीतम ने पश्चिमी विचार और भारतीय सनातनी तत्वों को मिलाकर एक समानान्तर सत्य के रूप को प्रस्थापित करने का प्रयास किया है।

सन्दर्भ संकेत

1.	डॉ0 शीला सिन्हा	– प्रसाद के नाटकों में मनोवैज्ञानिकता	– पृ0सं0 –138
2.	डॉ0 शीला सिन्हा	– प्रसाद के नाटकों में मनोवैज्ञानिकता	– पृ0सं0 –139
3.	डॉ0 रामकुमार राय	– असामान्य मनोविज्ञान	– पृ0सं0 –208
4.	जगदानन्द पाण्डेय	– असामान्य मनोविज्ञान	– पृ0सं0 –35
5.	डॉ0 सीताराम जायसवाल	– मनोविज्ञान की ऐतिहासिक रूपरेखा	– पृ0सं0 –432
6.	कैल्विन एस0 हॉल	– फ्रायड मनोविज्ञान प्रवेशिका (अनुवाद बी0 डी0 भट्ट)	– पृ0सं0 –29, 30
7.	हंस राज भाटिया	– समाज मनोविज्ञान	– पृ0सं0–91
8.	कृष्णा सोबती	– डार से बिछुड़ी	– पृ0सं0 –23
9.	मृदुला गर्ग	– एक तिकोना दायरा	– पृ0सं0 –70
10.	डॉ0 शीला सिन्हा	– प्रसाद के नाटकों में मनोवैज्ञानिकता	– पृ0सं0 –69
11.	डॉ0 शीला सिन्हा	– प्रसाद के नाटकों में मनोवैज्ञानिकता	– पृ0सं0 –63
12.	रामवृक्ष बेनीपुरी	– पतितों के देश में	– पृ0सं0 –83
13.	डॉ0 शीला सिन्हा	– प्रसाद के नाटकों में मनोवैज्ञानिकता	– पृ0सं0 –67
14.	शिवानी	– विषकन्या	– पृ0सं0 –20
15.	शिवानी	– कृष्णवेणी	– पृ0सं0 –26
16.	शिवानी	– कृष्णवेणी	– पृ0सं0–37,38

17.	कृष्णा सोबती	– मित्रो मरजानी	– पृ0सं0 –104, 105, 110, 111
18.	मृदुला गर्ग	– चित्तकोबरा	– पृ0सं0 –101, 102, 63, 89
19.	मृदुला गर्ग	– चित्तकोबरा	– पृ0सं0 –111
20.	मृदुला गर्ग	– चित्तकोबरा	– पृ0सं0 –154
21.	शशि प्रभा शास्त्री	– परछाइयों के पीछे	– पृ0सं0 –36,39,40
22.	शशि प्रभा शास्त्री	– परछाइयों के पीछे	– पृ0सं0 –46, 47
23.	प्रेमचंद	– गोदान	– पृ0सं0 –251
24.	प्रताप नारायण श्रीवास्तव	– विदा	– पृ0सं0 –17
25.	शिवानी	– भैरवी	– पृ0सं0 –53
26.	शिवानी	– भैरवी	– पृ0सं0 –101
27.	डॉ0 रामकुमार राय	– असामान्य मनोविज्ञान	– पृ0सं0 –201
28.	अमृता प्रीतम	– जलावतन	– पृ0सं0 –79
29.	अजीत कौर	– धुप वाला शहर	पृ0सं0 –291
30.	अजीत कौर	– धुप वाला शहर	– पृ0सं0 –285
31.	डॉ0 सीताराम जायसवाल	– मनोविज्ञान की ऐतिहासिक रूपरेखा	– पृ0सं0 – 443, 445
32.	उषा प्रियंवदा	– रुकोगी नहीं राधिका	– पृ0सं0 –41
33.	कृष्णा सोबती	– जिन्दगीनामा	– पृ0सं0 –226
34.	कृष्णा सोबती	– सूरजमुखी अंधेरे के	– पृ0सं0 –55, 56
35.	मन्नू भंडारी, राजेन्द्र यादव	– एक इंच मुस्कान	– पृ0सं0 –59
36.	मन्नू भंडारी, राजेन्द्र यादव	– एक इंच मुस्कान	– पृ0सं0 –52, 53
37.	मन्नू भंडारी, राजेन्द्र यादव	– एक इंच मुस्कान	– पृ0सं0 –60

38.	मन्नू भंडारी, राजेन्द्र यादव	– एक इंच मुस्कान	– पृ0सं0 –105
39.	डॉ0 दलीप कौर टिवाणा	– वाट हमारी	– पृ0सं0 –88, 89
40.	जसवन्त कौर	– बलिदान	– पृ0सं0 –84
41.	M.C. Dougall	– Social Psychology	– Pg. No.-61
42.	अमृता प्रीतम	– डाक्टर देव	– पृ0सं0 –16
43.	डॉ0 उर्वशी ज0 सूरती	– आधुनिक हिन्दी कविता में मनोविज्ञान	– पृ0सं0 –331
44.	अमृता प्रीतम	– बुलावा	– पृ0सं0 –83
45.	प्रेमचन्द	– गोदान	– पृ0सं0 –251
46.	अमृता प्रीतम	– धरती, सागर ते सीपियाँ	– पृ0सं0 –32
47.	अमृता प्रीतम	– धरती, सागर ते सीपियाँ	– पृ0सं0 –16
48.	करेन हार्नी	– अवर इनर कॉन्फ्लिक्ट्स	– पृ0सं0 –15
49.	करेन हार्नी	– अवर इनर कॉन्फ्लिक्ट्स	– पृ0सं0 –23, 24
50.	एरिक फ्रॉम	– द सेन सोसाइटी	– पृ0सं0 –28, 29
51.	डॉ0 सीता राम जायसवाल	– मनोविज्ञान की ऐतिहासिक रूपरेखा	– पृ0सं0 –482
52.	मेहरून्निसा परवेज	– उसका घर	– पृ0सं0 –83
53.	मन्नू भण्डारी	– स्वामी	पृ0सं0 –42
54.	मन्नू भण्डारी	– स्वामी	– पृ0सं0 –44
55.	मन्नू भण्डारी	– स्वामी	– पृ0सं0 –55
56.	मन्नू भण्डारी	– स्वामी	– पृ0सं0 –112
57.	उषा प्रियंवदा	– शेष यात्रा	– पृ0सं0 –28
58.	शशि प्रभा शास्त्री	– सीढ़ियाँ	– पृ0सं0 –325
59.	अमृता प्रीतम	– जेबकतरे	– पृ0सं0 –60
60.	अमृता प्रीतम	– जेबकतरे	– पृ0सं0 –86, 87

61.	सूरज नारायण मुंशी, सावित्री एस0 निगम	– रोगीमन	– पृ0सं0 –78
62.	अमृता प्रीतम	– इक सी अनीता	– पृ0सं0 –21
63.	डॉ0 यदुनाथ सिन्हा	– मनोविज्ञान	– पृ0सं0 –246
64.	अमृता प्रीतम	– इक सी अनीता	– पृ0सं0 –133
65.	अमृता प्रीतम	– इक सवाल	पृ0सं0 –104
66.	Schindra Sen	– Political Philosophy of Ravindra Nath	– Pg. No.-71
67.	अमृता प्रीतम	– रंग दा पत्ता	– पृ0सं0 –11
68.	अमृता प्रीतम	– कोई नहीं जाणदा	– पृ0सं0 –41
69.	अमृता प्रीतम	– कोई नहीं जाणदा	– पृ0सं0 –40
70.	जसवन्त कौर	– बलिदान	– पृ0सं0 –108, 109
71.	शशि प्रभा शास्त्री	– नावें	– पृ0सं0 –147
72.	अमृता प्रीतम	– कच्ची सड़क	– पृ0सं0 –69
73.	अमृता प्रितम	– पक्की हवेली	– पृ0सं0 –43